
का मासिक पत्र



इस भय के साथ द्रुपद पर एक और समस्या आ पड़ी। ऐसी परिस्थिति पैदा हो गई थी कि उसके बन्धुओं को भी शिखण्ड़ी के बारे में सच मालूम हो जाता। उनके समक्ष अपनी प्रतिष्ठा कायम रखने के लिए उसने एक नाटक खेला। वह पत्नी के पास अपने नौकर चाकरों के साथ गया-"अब एक बड़ी समस्या पैदा हो गई है। शिखण्ड़ी के ससुर को यह सन्देह हो रहा है कि वह लड़की है। इस बहाने कि हमने उसे धोखा दिया है, वह हम पर धावा बोलने आ रहा है। यह सब क्या है? मुझे भी सन्देह होने लगा है कि कहीं शायद वह मर्द न हो। सच क्या है, यह तो, तुम जाने बगैर नहीं रह सकती। कहीं मैंने भूल से हिरण्यवर्मा को धोखा तो नहीं दिया है?"

द्रुपद की पत्नी ने द्रुपद की प्रतिष्ठा की बड़ी बुद्धिमत्ता से रक्षा की। उसने अपने पति से कहा-"महाराज, यह सच है कि शिखण्ड़ी लड़की है। बहुत दिन बाद बच्चा पैदा हुआ। यदि कहती कि पहली सन्तान ही लड़की थी तो सपत्नियाँ परिहास करतीं। इसलिए मैंने झूठ कहा। आपको मुझपर प्रेम था; इसलिए जो कुछ मैंने कहा, उस पर आपने विश्वास किया। और जो कुछ पुत्र के लिए किया जाना चाहिए था, वह सब आपने किया। आखिर हिरण्यवर्मा की लड़की से उसका विवाह भी करवा दिया। यह भेद अब इतने वर्षों बाद खुला।"

द्रुपद ने अपने मन्त्रियों से कहा-"अब सुना आपने? अब हमें क्या करना है?"

"हमारा नगर आसानी से शत्रु के वश में नहीं आ सकता। फिर भी उसकी रक्षा के लिए हमें और प्रबन्ध करने होंगे।" मन्त्रियों ने कहा।

तो भी द्रुपद और उसकी पत्नी को युद्ध का भय लगा रहा। द्रुपद ने देवताओं से युद्ध की आशङ्का हटाने के लिए प्रार्थना की।

शिखण्ड़ी को मालूम हो गया कि उसके कारण कैसी परिस्थिति पैदा हो गई थी और कैसे उसके माँ बाप चिन्तित थे।

"मैं इनका दुख नहीं देख सकती। इससे तो अच्छी आत्महत्या है।" यह सोच, बिना किसी को बताये वह घर छोड़कर पासवाले जङ्गल में चली गई।

वह जिस जङ्गल में पहुँची थी वह स्थूणाकर्ण नाम के एक यक्ष राजा का था। वह कुबेर के अनुचरों में था। बहुत बलवान था। उसके डर के कारण जङ्गल में कोई न घुसता था।

उस निर्जन वन में बिना कुछ खाये पिये शिखण्ड़ी कुछ दिन घूमती फिरी, फिर उसको अचानक, एक दिन यक्ष राजा दिखाई दिया।





उसने उससे पूछा-"तुम कौन हो जो इस जङ्गल में आकर यों भूखी मर रही हो? क्या मैं तुम्हारी कोई मदद कर सकता हूँ?"

"आप मेरी कुछ भी सहायता नहीं कर सकते। मेरा कष्ट ऐसा नहीं है, जो दूसरे दूर कर सकें।" शिखण्ड़ी ने बड़े शोक से कहा

"ऐसा न कहो। मैं कुबेर का अनुचर हूँ। ऐसी कोई सहायता नहीं है, जो मैं किसी के लिए न कर सकूँ। अगर ऐसी कोई चीज़ भी माँगी जो न दी जा सकती हो, वह भी मैं देने के लिये तैयार हूँ।" यक्ष ने कहा।

शिखण्डी ने अपने विवाह के बारे में तो बताया ही, यह भी बताया कि उसके ससुर, पिता पर आक्रमण करने आ रहे हैं। "मेरे ससुर के हमारे नगर पर आक्रमण करने के पूर्व, अगर आप कर सकें तो मुझे मर्द बना दीजिये। और किसी तरह मेरे कष्ट नहीं दूर हो सकते।" उसने कहा।

यक्ष के सामने एक समस्या आ पड़ी। उसने कुछ सोच कर कहा- "कुछ भी हो, वचन देकर मैं नहीं मुकरूँगा। थोड़े समय के लिए तेरा स्त्रीत्व लेकर, मैं अपना पुरुषत्व तुझको दे देता हूँ। परन्तु तुम्हें वचन देना होगा कि तुम्हारा काम हो जाने के बाद, तुम मेरा पुरुषत्व मुझे वापस कर दोगे।"

"धन्यवाद, जब मेरे ससुर हमारा नगर छोड़कर चले जायेंगे, तब में आपका पुरुषत्व आपको देकर अपना स्त्रीत्व ले जाऊँगी।" शिखण्डी ने कहा।

क्योंकि स्थूलकर्ण में दिव्यशक्ति थी, इसलिए उसने अपना पुरुषत्व शिखण्डी को

दे दिया, और उसका स्त्रीत्व लेकर वह घर चला गया।

अब शिखण्ड़ी मर्द हो गया। वह पुरुषत्व के कारण चमकने सा लगा। पिता के घर वापस आ गया। माता पिता को नमस्कार करके उसने जो कुछ जङ्गल में हुआ था, वह सब कह सुनाया। वे भी बहुत खुश हुये। द्रुपद का हौसला बढ़ा। उसने हिरण्यवर्मा को कहला भेजा- "अगरआपको कोई सन्देह हो कि मेरा लड़का मर्द नहीं है, तो आप स्वयं आकर सच मालूम कर सकते हैं।"

यह सुन हिरण्यवर्मा पाञ्चाल देश की राजधानी, काम्पिल्य नगर आया और एक ब्राह्मण को दूत बनाकर उसने द्रुपद के पास भेजा।

इस ब्राह्मण ने द्रुपद के पास जाकर कहा-"राजाधम, तुमने मेरी लड़की को अपनी लड़की की पत्नी बनाकर मुझे धोखा दिया। इसका फल तुम शीघ्र ही भुगतोगे।" द्रुपद ने उस ब्राह्मण को कुछ भेंट देने चाहे। पर ब्राह्मण ने उनको लेने से इनकार कर दिया। उसके चले जाने के बाद द्रुपद ने स्वयं हिरण्यवर्मा के पास





एक ब्राह्मण भेजा। उसने हिरण्यवर्मा के पास जाकर कहा- "महाराज, हमारे महाराज ने आपसे यह कहने के लिये कहा है कि किसी ने आपसे झूठ कहा है कि हमारा शिखण्ड़ी पुरुष नहीं है। वह वास्तव में, पुरुष ही है। आप निस्सङ्कोच आकर स्वयं देखिये।"

हिरण्यवर्मा ने सच जानने के लिए कुछ लोगों को द्रुपद के घर भेजा।

कुछ दिनों बाद वापस जाकर उन्होंने बताया कि शिखण्डी स्त्री नहीं, पुरुष ही था।

हिरण्यवर्मा का क्रोध काफूर हो गया, वह बहुत ही आनन्दित हुआ। वह शत्रु के रूप में आया था पर समधी के घर अतिथि हो गया। उनका आतिथ्य स्वीकार करके, उसने जामाता को बहुत-सा धन, घोड़े, हाथी, गौ, हज़ार सुन्दर दासियाँ दीं। वह खुशी खुशी घर वापस चला गया।

इधर शिखण्डी की तात्कालिक समस्या सुलझ रही थी और उधर यक्ष पर एक मुसीबत आ पड़ी। एक दिन कुबेर, अपने परिवार सहित विमान में आकर यक्ष के घर की छत पर उतरा।

कुबेर को आश्चर्य हुआ कि उसके आने के बहुत देर बाद भी स्थूणाकर्ण उसका स्वागत करने के लिए न आया था। तब उसे मालूम हुआ कि स्थूणाकर्ण ने कुछ समय के लिए पाञ्चाल राजा के लड़की को अपना पुरुषत्व देकर, उसका स्त्रीत्व स्वीकार कर लिया था और इसलिए वह उसके समक्ष आने में शर्मा रहा था।

"दुष्ट कहीं का, उसने यह क्या काम किया? उसे तुरन्त मेरे पास ले आओ।" कुबेर ने अपने एक यक्ष को आज्ञा दी। स्त्री रूप में यक्ष, कुबेर के सामने आया,

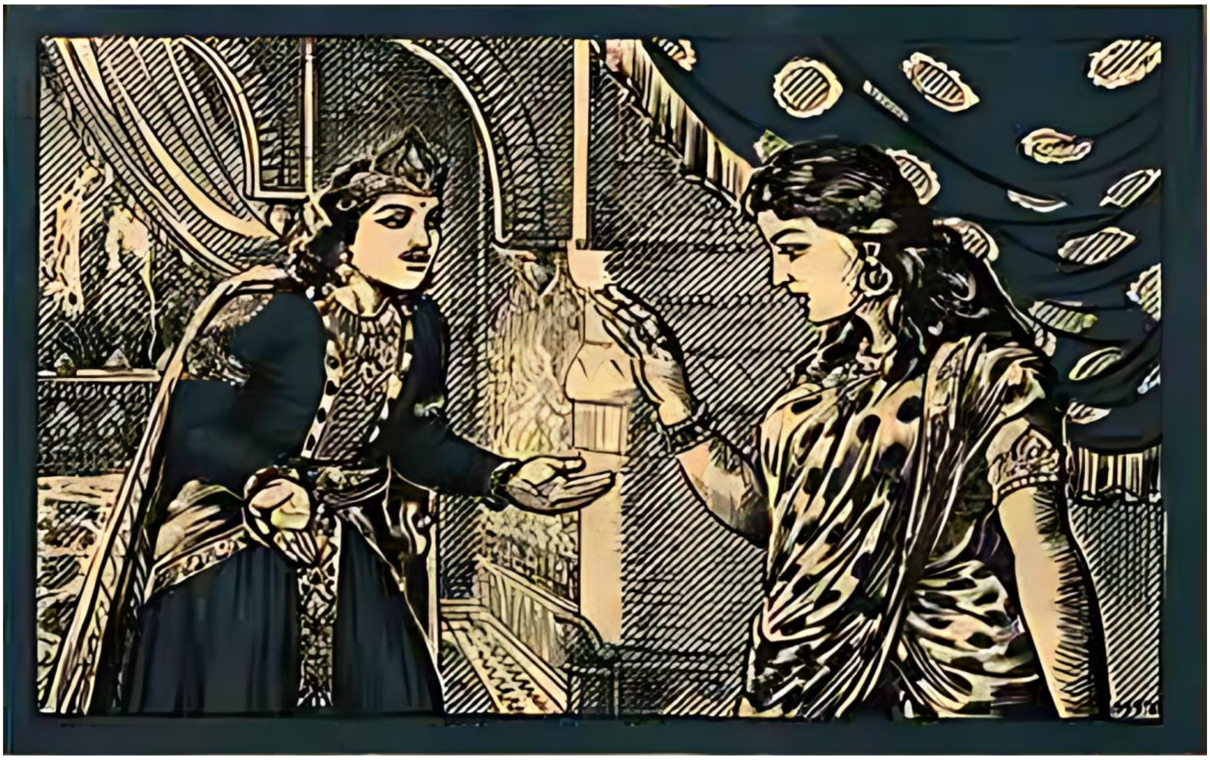
और शर्माता सिर झुका कर खड़ा हो गया।

कुबेर को उसे देखकर और गुस्सा आया-"नीच कहीं का? बिना सोचे विचारे, अपना पुरुषत्व किसी को सौप बैठे और उसका स्त्रीत्व ले लिया? तुम हमेशा के लिए स्त्री बने रहो। उस स्त्री को हमेशा के लिए पुरुष बने रहने दो। यही तुम्हें दण्ड है।" कुबेर ने यक्ष को शाप दिया।

बाकी यक्षों को उस यक्ष पर दया आई। उन्होंने कुबेर से पूछा-"क्या इस शाप को हटाने का भी कोई उपाय है?" तब कुबेर को भी दया आई। उसने कहा कि शिखण्ड़ी के मर जाने के बाद यक्ष को फिर पुरुषत्व प्राप्त हो सकेगा। फिर कुबेर अपने अनुचरों के साथ विमान में चला गया।

ससुर के चले जाने के बाद, अपने वचन के अनुसार शिखण्ड़ी ने यक्ष के पास आकर कहा-"आपकी कृपा से मेरी आपत्ति टल गई है। आप अपना पुरुषत्व लेकर मुझे मेरा स्त्रीत्व वापिस कर दीजिए।"

जो कुछ गुजरा था, यक्ष ने शिखण्ड़ी से कहा-"तुम आजीवन मेरा पुरुषत्व लेकर सुख से रहो। बचन के अनुसार तुम मेरा



पुरुषत्व मुझे वापस देने आये, यह देख मुझे बड़ी खुशी होती है। मैंने पुराने जन्म में कोई पाप किया होगा, इसीलिए ही ऐसा हो रहा है। नहीं तो जब मैं स्त्री रूप में था, तभी ही क्यों कुबेर मुझे देखने आये।"

शिखण्ड़ी, यक्ष को प्रणाम करके खुशी खुशी घर आया। देवताओं की पूजा करके उसने ब्राह्मणों को सोने चान्दी की वस्तुयें भेंट में दी। द्रुपद के आनन्द की तो सीमा ही न थी। उसने शिखण्ड़ी, धृष्टद्‌युम्न को द्रोण के पास वाण विद्या सीखने के लिए भेजा।

द्रोण के शिष्य होकर, उन्होने धनुर्वेद का पूर्ण रूप से अभ्यास किया।

भीष्म ने यह सारी कहानी दुर्योधन को सुनाकर कहा-"बेटा! मैंने ये सब रहस्य अपने दूतों द्वारा मालम किये हैं। वे बावलों, पागलों, अपाहिजों और बहरों की तरह द्रुपद के नगर में रहे और हर बात मालूम कर मुझे बताते रहे। शिव के वर के कारण अम्बा ने शिखण्ड़ी का जन्म लिया। कुछ दिन स्त्री के रूप में रही, अब उसने पुरुष रूप धारण कर लिया है। अगर युद्ध भूमि में वह मेरे सामने आया तो मैं उसको देखूँगा भी न। युद्ध न करूँगा न मारूँगा ही। मैंने नियम बना रखा है। कि स्त्रियों से अथवा उन लोगों से, जो कभी स्त्री रहे हों या स्त्री का नाम रखनेवालों से, और स्त्रियों की तरह व्यवहार करनेवालों से में युद्ध नहीं करूँगा। यदि भीष्म ने किसी स्त्री को मार दिया तो मालूम है कितनी बदनामी होगी?

दुर्योधन भी कुछ देर तक सोचता रहा। फिर उसने निश्चय किया उनके लिये इस प्रकार का नियम ठीक ही था।

(अभी है)





[१४]

[चन्द्रवर्मा, पहाड़ की तलहट्टी में एक झोंपड़ी के पास पहुँचा। वहाँ उसे एक बूढ़ा दिखाई दिया। पहले बूढ़े ने सोचा कि वह भी एक राज सैनिक था। फिर सच मालूम होने पर, उसने उसको बताया कि उसके पास काँसे के किले के मार्ग का नक्शा था। इतने में राज-सैनिक आ गये। बूढ़ा भाग गया। चन्द्रवर्मा झोंपड़ी में फँस गया। सैनिकों ने उसको बाहर आने के लिए कहा। बाद में--]

चन्द्रवर्मा के झोंपड़ी में से निकलते ही राज सैनिक हैरान रह गये। वे बूढ़े को पहचानते थे। उन लोगों की आशा थी कि इतने दिनों बाद बूढ़ा पकड़ा गया था। अगर उसके हाथ पैर बाँधकर, वे राजा के पास ले गये, तो बहुन-या ईनाम निलेगा।

"तुम कौन हो ! बूढ़ा कहाँ है?" सैनिकों के सरदार ने तलवार निकालकर, आँखें लाल करके, चन्द्रवर्मा की ओर लपक कर पूछा।

"मैं नहीं जानता आप किस बूढ़े के बारे में पूछ रहे हैं। इससे पहले कि मैं यह बताऊँ कि मैं कौन हूँ, मैं यह जानना चाहता हूँ कि आप कौन हैं।" चन्द्रवर्मा ने तलवार निकालकर कहा।



चन्द्रवर्मा का निर्भय होकर खड़ा होना, शान से तलवार निकालना देख, सैनिकों का सरदार थोड़ी देर के लिए कुछ घबरा गया। यह देख चन्द्रवर्मा ने कहा-"मुझे तुरन्त बताओ कि तुम किस राजा के सैनिक हो। अगर तुमने मुझे घेर कर मारने का प्रयत्न किया तो मारे जाओगे। झोंपड़ी की दीवार मेरे पीछे है। उस तरफ़ से तो तुम मुझपर हमला कर नहीं सकते। इसलिए एक एक करके तुमको मुझसे लड़ना होगा। यह लो, बच्चो।" चन्द्रवर्मा ने एक कदम आगे बढ़ाया।

चन्द्रवर्मा का कहना ठीक था, यह जानने के लिए सैनिकों के सरदार को अधिक समय न लगा। उसको घेरना व्यर्थ था। आमने सामने खड़े होकर युद्ध हुआ तो वह एक एक को यमपुरी भेज देगा। उसको देखते ही बड़ा अनुभवी बहादुर योद्धा मालूम होता था।

"आप तो कोई महान योद्धा मालूम होते हैं। आप जैसे के विरुद्ध साथ का योद्धा क्यों व्यर्थ लड़े? मैं राजा की आज्ञा पर एक बूढ़े को पकड़ने के लिए सारा जङ्गल छान रहा हूँ। अचानक आप दिखाई दिये। जो हुआ सो हुआ। अब हम अपने अपने रास्ते चलें।" सैनिकों के सरदार ने कहा।

चन्द्रवर्मा मन ही मन यह देख सन्तुष्ट हुआ। पर उसने शान से, धैर्य के साथ पूछा-"तुम्हारा राजा कौन है?"

"क्या आप नहीं जानते हमारा राजा कौन है? आप जिस राज्य की हद में है, अगर उसके राजा का नाम भी आप नहीं जानते हैं, तो आधर्य की बात है।" सैनिकों के सरदार ने कहा।

चन्द्रवर्मा यह सुन हँसा। "राज्य और उनकी सीमाओं को जानना तो मैं कभी का

भूल चुका हूँ। गुरु ने मरने से पहले मुझे एक राजा को देखने के लिए कहा था। उसका नाम शिवसिंह है। उनसे मिलने के लिए मैं भूमि के एक सिरे से दूसरे सिरे तक घूम रहा हूँ। इसी घूमने के सिलसिले में मैं तुमको दिखाई दिया। अब तुन जा सकते हो।" कहकर चन्द्रवर्मा तुरन्त मुड़ गया।

चन्द्रवर्मा की बातें सुनकर, सैनिकों और उनके सरदार को आश्चर्य हुआ। झोंपड़ी में घुसते हुए चन्द्रवर्मा को सैनिकों के सरदार ने रोककर कहा-"जी, आप तो कोई बड़े आदमी मालुम होते हैं। आपके गुरु ने जिस शिवसिंह से मिलने के लिए कहा था, वे ही इस राज्य के राजा हैं।"

चन्द्रवर्मा ने बड़ा आश्चर्य प्रकट किया। "धन्य हूँ। धन्य। ओहो, कितने दिनों बाद मेरा प्रयत्न सफल हुआ। चलिये। चलिये। मुझे तुरन्त शिवसिंह महाराज के दर्शन करने हैं।" चन्द्रवर्मा ने सैनिकों से कहा।

सरदार ने एक बार अपने सैनिकों की ओर देखा। फिर कुछ सन्देह



करते हुए चन्द्रवर्मा से पूछा-"जी, क्यों आपके गुरु ने हमारे राजा के दर्शन करने के लिए कहा था?"

"यह परम रहस्य है। बहुत ही बड़ा रहस्य...." चन्द्रवर्मा ने आकाश की ओर सिर उठाकर कहा-"काँसे के किले! अब तो हाथ में आ गये हो न?"

"काँसे का किला...." यह सुनते ही सैनिक चौके। आप को काँसे के किले के बारे में कैसे मालूम हुआ?" सरदार ने पूछा।

"उस काँसे के किले के बारे में मुझे और मेरे गुरु को ही मालूम है। पर



तुम्हारे प्रश्न से तो ऐसा प्रतीत होता है कि तुम भी उसके बारे में थोड़ा बहुत जानते हो। आश्चर्य है।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

"इस में आश्चर्य क्या है? उस काँसे के किले के रहस्य को जानने के लिए हम इस चालाक बूढ़े के लिए जङ्गलों में यों मारे मारे फिर रहे हैं।" सैनिकों के सरदार ने कहा।

चन्द्रवर्मा ने यकायक अपने दायें हाथ की हथेली पर टकटकी लगाकर देखा-"अब सब मालूम हो गया है। आपके राजा को सन्देह है कि उस बूढ़े के पास काँसे के किले के मार्ग का नक्शा है। उस बूढ़े के लड़के देव को जेलखाने में डाल रखा है। क्यों? आप का राजा भी क्या भोला भाला है!"

सैनिकों के सरदार ने चन्द्रवर्मा के हाथ को गौर से देखा-"आप तो सर्वज्ञ मालूम होते हैं। आपकी हथेली पर इन सब बातों का दिखाई देना आश्चर्यजनक है।"

"आश्चर्य किसको? तुम्हें या मुझे?" चन्द्रवर्मा ने क्रोधभरी दृष्टि से सरदार की ओर देखा। तुम तुरन्त यहाँ से जाओ । और उस टीले के पीछेवाले मैदान में मेरी प्रतीक्षा करो। मैं थोड़ी देर में वहाँ आ जाऊँगा। तब सब मिलकर राजा के पास चलेंगे। समझे?" उसने उनको आशा देते हुये कहा।

सैनिकों के सरदार को लगा कि चन्द्रवर्मा के पास कुछ अपूर्व शक्तियाँ थीं।

"अच्छा हुजूर।" कहकर वह अपने आदमियों को लेकर टीले के पीछे चला गया। उनके टीले के पीछे ओझल होते ही चन्द्रवर्मा पास के पेड़ों के झुरमुट में गया। "सब बात हो गई है। अब

हमको कोई खतरा नहीं है। कहाँ हो जाम्बवान?" वह चिल्लाया।

यह सुनते ही बूढ़ा पेड़ों के पीछे से आया। चन्द्रवर्मा के पास आकर पूछा-" जाम्बवान कौन है?"

"तुम ही हो। बूढ़ा कहकर पुकारना अच्छा न समझकर, मैने यों पुकारा। मैं शिवसिंह के पास जा रहा हूँ। मैं देव को तो कैद से छुड़ाऊँगा ही, काँसे के किले में रखी धन राशि में भी तुम्हें हिस्सा दिलाऊँगा। वहाँ का रास्ता दिखानेवाला नक्शा कहाँ है?" चन्द्रवर्मा ने कहा।

"क्या तुम्हारी बातों पर विश्वास किया जा सकता है?" बूढ़े ने सन्देह करते हुए पूछा।

"विश्वास न करोगे तो क्या करोगे? विश्वास करोगे तो तुम्हारा, तुम्हारे लड़के का लाभ होगा। जब यह मालूम हो गया हो कि पश्चिम में समुद्र के किनारे काँसे का किला है, तो पता लगा लेना कठिन नहीं है। समुद्र के किनारे चलता गया तो कभी न कभी तो वहाँ पहुँचूँगा ही। परन्तु तुम्हारे पास का नक्शा देखकर, यही सोच रहा हूँ कि आसान और कम फासलेवाला



रास्ता मालूम हो सकेगा।" चन्द्रवर्मा ने कहा।

चन्द्रवर्मा के इस प्रकार कहने पर बूढ़े से कुछ कहते न बना। उसने अपने कुड़ते में से ताड़-पत्र निकाला, और उसको पंखे की तरह घुमाकर कहा-"यह लो, यह काँसे के किले का रास्ता दिखानेवाला नक्शा।"

चन्द्रवर्मा ने उस नक्शे को बड़े गौर से देखा। उसमें पहाड़, जङ्गल, नदी, रेगिस्तान, सब साफ साफ चित्रित थे। जहाँ समुद्र दिखाया गया था, उससे सटकर, ऊँची



दीवारों वाला एक किला दिखाई दिया। उन दीवारों के परे भवनों पर, धुँआ-सा कुछ छाया हुआ था।

"यह काँसे का किला है।" चन्द्रवर्मा ने अपने मन के आश्चर्य और भय को काबू में करते हुए कहा-"इन पहाड़ों, जङ्गल, नदी, रेगिस्तानों को पार करके क्या किसी आदमी के लिए वहाँ पहुँचना सम्भव है?" उसने अपने से ही यह प्रश्न किया।

"इस काँसे के किले को हमारे एक पूर्वज ने देखा था। मैं बूढ़ा हो गया हूँ, नहीं तो मैं ही अकेला वहाँ हो आता।" बूढ़े ने कहा।

बूढ़े की बात सुनकर, चन्द्रवर्मा हँसा। "अच्छा, तो यह नक्शा मुझे दे दो। मैं स्वयं इस काँसे के किले को ढूँढने के लिए निकलूँगा। तेरे लड़के देव को भी साथ ले जाऊँगा। तुम इस कुटिया में आराम से रह सकते हो। रुद्रपुर के राजा शिवसिंह से मिलूँगा। उससे सब बातें कहूँगा। जब तक मैं और तुम्हारा लड़का देव वापस नहीं आ जाते, तब तक तुम यहीं रहो। मैं सब व्यवस्था किये देता हूँ।" उसने कहा।

बूढ़े ने आनाकानी करते हाथ का नक्शा चन्द्रवर्मा को देते हुए कहा-"कोई धोखा तो नहीं है? बूढ़ों को धोखा देना बड़ा पाप है।"

"मैं तुझे और तेरे लड़के को कभी धोखा नहीं दूँगा। राजा शिवसिंह को भी, अगर वह भला आदमी निकला, तो उसे भी कभी धोखा न दूँगा। अगर न हुआ तो....."

चन्द्रवर्मा ने अभी बात खतम न की थी कि उसको घोड़े का जोर से हिनहिनाना

सुनाई दिया। उसने पेड़ों के पीछे से टीले की ओर देखा। राज-सैनिकों का सरदार अपने घोड़े को टीले पर चढ़ाकर, झोपड़ी की ओर आ रहा था। यह देखकर चन्द्रवर्मा ने बूढ़े की ओर मुड़कर कहा-"मैं राज सैनिकों को साथ लेकर रुद्रपुर के राजा से जाकर मिलूँगा। तुम फिलहाल अपनी झोंपड़ी में रहो। मैं जल्दी ही तुम्हें खबर भेजूँगा। तब तुम शहर में आकर वहीं सुख से रहना।" कहता कहता वह सरदार के सामने गया।

चन्द्रवर्मा को पास आता देख सैनिकों के सरदार ने घोड़े से उतरते हुए कहा-"आप बहुत देर तक आये नहीं। इसलिए मैं ही चला आया। यह घोड़ा आपके लिए है। आप नगर आ रहे हैं, इसकी खबर मैंने राजा को पहुँचा दी है।" उसने कहा।

"मैं कुछ शक्तियों को आह्वानित करने के लिए जङ्गल गया था। पर उनमें से किसी ने भी तुम्हारे राजा के बारे में कोई अच्छी बात नहीं कही। मुझे यह देख अचरज हुआ। क्या तुम्हारा राजा इतना दुष्ट है?" चन्द्रवर्मा ने पूछा।



"हुजूर! राजा दुष्ट है या अच्छा, यह उसके सैनिकों को कैसे मालूम हो सकता है? यह बात तो प्रजा और दूसरे राजाओं को ही मालूम हो सकती है। हम तो बस यही चाहते हैं कि हमें हर महीने वेतन भते मिल जाया करें। जो हमें वह देता है, वह अच्छा राजा है, जो नहीं देता है, वह खराब राजा है।" सरदार ने कहा।

इन बातों से चन्द्रवर्मा को भान हो गया कि शिवसिंह के साथ उसे बहुत ही सावधानी बरतनी होगी। काँसे के किले तक पहुँचने के लिए उसको कुछ सेना की

आवश्यकता थी। वह शिवसिंह जैसे राजा के यहाँ से ही मिल सकती थी। अकेला काँसे के किले तक जाने का प्रयत्न करना आत्महत्या करने का समान होगा। रास्ते में बहुत-सी आपत्तियों का सामना करना होगा। इसीलिए ही वहाँ जाने का किसी ने प्रयत्न न किया था। पर शिवसिंह से अपने विषय में सब कुछ सच सच कह देना शायद खतरनाक हो। जैसे इन सैनिकों पर प्रभाव डाला है कि मेरे पास मन्त्र शक्तियाँ हैं, वैसे उसकी आँखों में भी धूल शोकनी पड़ेगी।

"हुजूर! क्या अब हम शहर चलें?" कहकर सरदार ने चन्द्रवर्मा को घोड़ा दिया। चन्द्रवर्मा लगाम पकड़कर जीन पर चढ़ गया। थोड़ी दूर जङ्गल में, फिर पहाड़ की घाटियों में से सफर करके, चन्द्रवर्मा और सैनिक दो घण्टे बाद रुद्रपुर पहुँचे। नगर के द्वार व मार्ग तोरणों से अलंकृत थे। राज-मार्ग के दोनों ओर पंक्तियों में नगर निवासी खड़े थे। चन्द्रवर्मा के राजमार्ग पर आते ही तालियाँ बजीं, जयजयकार हुआ। लोग चिल्लाये-" महामान्त्रिक की जय....!"

यह जयजयकार सुनकर चन्द्रवर्मा हैरान रह गया। क्या मैं महामान्त्रिक हूँ? यह तो बड़ी अजीब बात है, उसने सोचा। इतने में उसे सरदार की बात याद आई। हथेली देखकर बूढ़े के बारे में, काँसे के किले के रास्ते के नक्शे के बारे में जो कुछ कहा था वह सुनकर सरदार को आश्चर्य हुआ होगा। इसलिए उसने राजा को खबर भेजी होगी कि मैं बड़ा मान्त्रिक हूँ। इस तरह सम्मानित कर मीठी मीठी बातों से मुझे यह राजा वश में करने का प्रयत्न कर रहा है।

(अभी है)





पडूवा नगर में बाप्टिस्टा नाम का एक धनी व्यापारी रहा करता था। उसकी बड़ी लड़की केथरीन बड़ी चुड़ैल थी। वह बहुत मुँहफट्ट और गुसैल थी। इसलिए उसे लोग चुड़ैल केथरीन कहा करते। उस जैसी लड़की से भला कौन विवाह करता! बाप्टिस्टा की छोटी लड़की बहुत ही सात्विक स्वभाव की थी। उससे शादी करने के लिए बहुत-से लोग उतावले हो रहे थे। पर पिता कहा करता कि जब तक बड़ी लड़की की शादी नहीं हो जाती, तब तक छोटी लड़की की नहीं होगी। इसके लिए सब उसकी नुक्ताचीनी किया करते।

पेट्रूशियों नाम का व्यक्ति एक दिन कन्या को ढूँढ़ता पडूवा आया। उसने केथरीन के बारे में सुन रखा था। उसे यह भी मालूम था कि वह सुन्दर थी और धनी भी। उसके चुड़ैल होने की उसने परवाह न की। उसने सोचा कि शादी के बाद वह उसे ठीक कर लेगा।

पेट्रूशियों यह कर भी सकता था। वह भी केथरीन की तरह मुँहफट था। बातूनी, और बहुत समझदार। इसीलिए, अगर अन्दर गुस्सा न भी होता तो वह बाहर दिखा सकता था।

उसने बाप्टिस्टा के पास जाकर कहा-"सुना है आपकी लड़की केथरीन मीठे स्वभाव की है। अच्छी है। उससे विवाह करने के लिए मैं वेरोना से आया हूँ।"

उसे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि उसकी लड़की के लिए वर मिल रहा था। पर उसने यह भी देखा कि जो वर्णन उसने दिया था वह लड़की पर ठीक न बैठता था।

ठीक उसी समय केथरीन को सङ्गीत सिखानेवाले शिक्षक ने आकर बाप्टिस्टा से कहा-"मैंने आपकी बड़ी लड़की से ठीक तरह गाने के लिए कहा और उन्होंने अपना बाजा मेरे सिरपर तोड़ मारा।"

"अरे, कितनी हिम्मतवाली है। मुझे उनसे थोड़ी देर बातचीत करनी है।" पेट्रूशियो ने कहा। फिर उसने बाप्टिस्टा से कहा-"मुझे बहुत से काम हैं। विवाह का निश्चय जल्दी हो तो अच्छा। आप मेरे पिता को जानते हैं। उनके गुजर जाने के बाद सारी सम्पति का मैं ही उत्तराधिकारी हूँ। अगर आपकी लड़की शादी के लिए मान जाये तो आप कितना दहेज दे सकेंगे?"

"विवाह के समय बीस हज़ार और मृत्यु के बाद मेरी सम्पत्ति में उसको आधा मिलेगा।" वृद्ध ने जवाब दिया। उसने जाकर अपने बड़ी लड़की को भेजा।

तुरन्त दोनों में वाक्युद्ध शुरु हो गया। केथरीन ने जो कुछ मुख में आया कह डाला। पेट्रूशियो ने भी हर बात का जवाब दिया। फिर उसने कहा-"तुम तो बड़ी नरम हो। तुम्हारे बारे में कई ने कई झूठी बातें बताई। कहा कि तुम



चुड़ैल हो, लङ्ड़ाती हो, सब झूठ तुम्हारे पिता भी मान गये हैं। अगले रविवार को हम दोनों की शादी होगी।

इतने में बाप्टिस्टा ने आकर पूछा- "लड़की क्या कह रही है? क्या शादी के लिए मान गई है?" पेट्रूशियो ने कहा कि मान गई है।

केथरीन ने गरमाकर कहा-"इस बेअक्ल से शादी?"

यह सुनते ही बूढ़े ने पेट्रूशियो से कहा-"तुम तो कहते थे कि शादी के लिए मान गई है।"

"यह भी प्यार का झगड़ा है। आपके सामने यों बात कर रही है। मुझसे तो बहुत प्रेम से बातचीत की थी। रविवार के दिन विवाह निश्चय किया है। केथरीन आओ। हम जाकर विवाह के कपड़े खरीद लायें।" पेट्रूशियो ने कहा।

यह सुनकर बाप्टिस्टा को विश्वास हो गया। विवाह के लिए व्यवस्था की जाने लगी। रविवार के दिन शादी देखने के लिए अतिथि आये। पर कहीं दुल्हा नहीं दिखाई दिया। पेट्रूशियो ने मेरा अपमान करने के लिए ही यह सब किया है,





यह सोचकर केथरीन की आँखों में तरी आ गई।

आखिर पेट्रूशियो आया। परन्तु उसने दूल्हे की पोषाक नहीं पहन रखी थी। यूँहि ऊटपटाङ्ग कपड़े पहन रखे थे। जो कपड़े केथरीन के लिए लाने थे, वे भी वह न लाया। उसके साथ उसका नौकर था। दोनों दो बदसूरत घोड़ों पर आये थे।

"ये क्या कपड़े हैं? इन्हें बदलकर आओ। दुल्हन इन्तजार कर रही है।" बाप्टिस्टा ने कहा। पर पेट्रूशियो ने न सुनी। उसने कहा-"केथरीन मुझसे शादी करेगी या मेरे कपड़ों से?"

वह उन्हीं कपड़ों में, विवाह के लिए आये हुए लोगों के साथ गिरिजाघर गया। विवाह करनेवाले पुरोहित ने दुल्हन से पूछा-"क्या तुम इससे शादी करने के लिए राजी हो?" झट पेट्रूशियो चिल्लाया-"राजी क्यों नहीं है?" उसने पुरोहित को एक लात मारी। उसका यह व्यवहार देख केथरीन काँप उठी।

यह सब नाटक था। केथरीन को रास्ते पर लाने के लिए पेट्रूशियों ने ऐसे बहुत से नाटक किये।

विवाह के बाद बाप्टिस्टा ने एक बड़ी दावत की व्यवस्था की। पर पेट्रूशियो ने कहा कि एक मिनट भी वह वहाँ नहीं ठहरेगा। और पत्नी को लेकर तुरन्त चला जायेगा। कई ने कई तरह समझाया। पर उसने किसी की न सुनी।

पेट्रूशियो, केथरीन और नौकर घोड़ों पर चढ़कर घर की ओर निकले। केथरीन का घोड़ा बहुत बूढ़ा था। चल नहीं पाता था। जैसे तैसे पति-पत्नी घर पहुँचे। पेट्रूशियो ने अपनी पत्नी का स्वागत किया।

परन्तु उसने उसको खाने न दिया। आराम लेने न दिया। उसके नौकरों ने, उसके लिए तरह-तरह के पकवान बनवाये। परन्तु पेटूशियो ने कहा कि एक भी अच्छा न था। उसने सब उठाकर फेंक दिये और नौकरों को डाँटा फटकारा। "मेरी पत्नी को इस तरह की ऊटपटाङ्ग चीजें खिलाओगे?" केथरीन सफर के कारण थकी हुई थी ही, फिर खाली पेट, पति के सोने के कमरे में गई। पेटूशियो ने वहाँ भी एक नाटक खेला। गद्दे और तकिये दूर फेंककर कहा-" मेरी पत्नी के लिए क्या ऐसे गद्दे और तकिये दिये जाते हैं?"

केथरीन पीठ भी सीधी न कर सकी। कुर्सी में बैठी बैठी कभी ऊँघती तो कभी उसका चिल्लाना सुन उठकर बैठ जाती। उसकी रात इस तरह गुजरी मानों नरक में हो।

अगले दिन भी पेटूशियों ने उसको भोजन न करने दिया। जो कुछ परोसा गया था, नौकरों ने यह कहकर हटा दिया कि वह अच्छा न था। उसने नौकरों को मनाकर चुपचाप खाने के लिए कुछ लाने को कहा। पेटूशियो ने उनसे पहले कह रखा था। "यदि मालिक को पता



लगा गया तो वे हमारे प्राण निकाल देंगे।" उन्होंने कहा।

"मुझे न खाने देते हैं, न सोने देते हैं! तो क्या मुझे मारने के लिए ही इन्होंने मुझसे शादी की थी? और दिखाते यह है जैसे मुझसे प्रेम कर रहे हों। ऐसा लगता है, जैसे अपने प्रेम से ये मुझे मार ही देंगे। मैंने कभी किसी की खुशामद न की। और अब मुझे नौकरों के सामने हाथ पसारने पड़ रहे हैं।" केथरीन ने सोचा।

इतने में पेटूशियो ने कोई पकवान लाकर कहा-"यह लो, मैं इसे तुम्हारे



लिये स्वयं बनाकर लाया हूँ।" परन्तु उसने उससे पूछा-"क्या खाना खतम हो गया है?" और तुरन्त तश्तरी लेकर नौकर को दे दी।

फिर उसने पत्नी से कहा-"हम फौरन तुम्हारे पिता के यहाँ जायेंगे। तुम्हारे लिये अच्छे कपड़े सिलवाये हैं। दर्जी से लाने के लिए कहा है।"

आखिर जब वे कपड़े लाये गये, तो उसने कहा कि वे अच्छे नहीं हैं। केथरीन को वे पसन्द थे। उसने पूछा-"इनमें क्या खराबी है? अच्छे ही तो हैं?"

"जैसे मैंने कहा था वैसे इसने नहीं सिये हैं। नहीं, तुम यह मत लो।" पेट्रूशियो ने कहा।

पेट में थोड़ा भोजन गया था, इसलिए केथरीन को गुस्सा आ गया। "मुझे आप निरा बच्चा न समझिये। आप से अधिक बड़े लोगों ने ही मेरी बात मानी है। मैं उन्हें पहनकर रहूँगी।" उसने तेज़ी में आकर कहा।

पेट्रूशियो ने यह दिखाया जैसे उसकी बात समझ में न आई हो। "मैंने सोचा कि शायद तुम्हें ये पसन्द आयेंगे। क्या करें। चलो तुम्हारे घर इन्हीं कपड़ों में चलें।" कहकर उसने दर्जी को भेज दिया।

सफर के लिए घोड़े तैयार किये गये। तब तक दुपहर हो चुकी थी। परन्तु पेट्रूशियो ने अपनी पत्नी से कहा-"अब सवेरे के सात बजे हैं। भोजन के समय तक तुम्हारे घर पहुँच जायेंगे।"

"अभी ही दोपहर के दो बज चुके हैं। हम शाम के भोजन तक ही वहाँ पहुँच सकेंगे।" केथरीन ने कहा।

"जो मैं कहता हूँ, तुम उसका उल्टा जवाब देती हो। आज मैं नहीं चलूँगा।

चलते समय चाहे मैं कितने ही घण्टे बताऊँ उसका विरोध नहीं होना चाहिए। समझे?" पेट्रूशियो ने कहा।

उसने केथरीन को तब तक घर न जाने दिया जब तक वह उसकी हर बात पर हाँ न कहने लगी। आखिर वे रवाना हुए। रास्ते में एक बात हुई। उसने आकाश की ओर देखकर कहा-"यह देखो, चन्द्रमा कैसे चमक रहा है।"

केथरीन ने कहा-"यह चन्द्रमा तो नहीं है, सूर्य है।"

"जो कुछ मैं कहता हूँ, तुम उसपर हमेशा न करते हो। मैं नहीं आऊँगा।" पेट्रूशियो पीछे जाने के लिए तैयार हो गया। केथरीन ने तङ्ग आकर कहा-"हाँ, वह सूर्य नहीं, चन्द्रमा है।"

"सूर्य है, तो चन्द्रमा क्यों कहते हो?" पेट्रूशियों ने कहा। तुरन्त केथरीन हर बात पर सहमत हो गई।

केथरीन जब घर गई, तो उसकी छोटी बहन और उनके घर के एक और लड़की का विवाह हो गया था। नये दुल्हाओं ने पेट्रूशियो की मजाक उड़ाई कि उनको अच्छी पत्नियाँ मिली थीं, जब कि उसकी पत्नी निरी चुड़ैल थी। केथरीन के पिता



भी केथरीन में जो परिवर्तन हुआ था, उससे परिचित न था। पेट्रूशियो ने कहा-"बाजी लगाओ, हम अपनी अपनी पत्नियों को आने के लिए कहें। देखें किसकी पत्नी पति की आज्ञा मानकर जल्दी आती है।" नये दुल्हे इसके लिए मान गये।

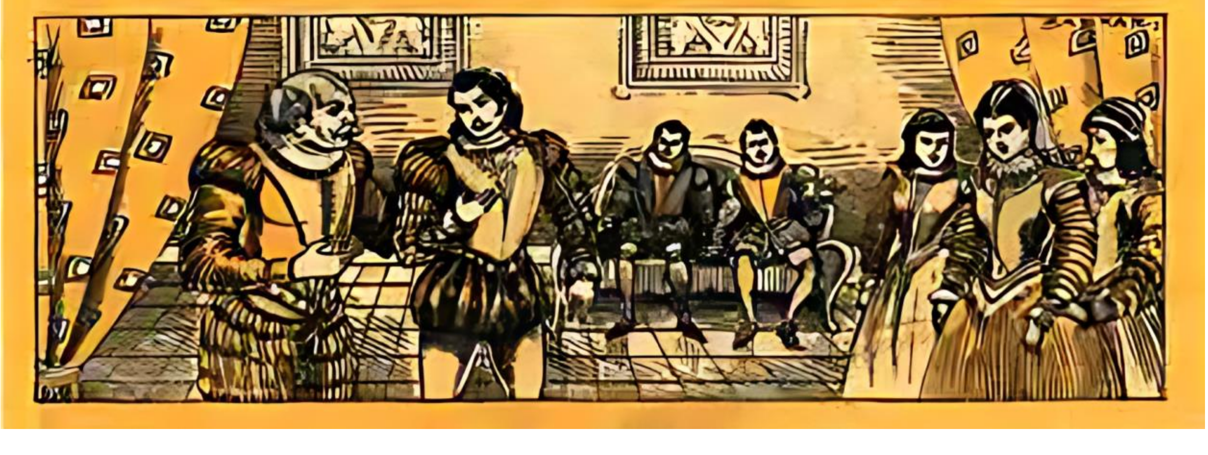
पहले छोटी बहन की पति ने पत्नी को आने के लिए कहा। नौकर ने आकर बताया-"वे कहती हैं कि वे अभी व्यस्त हैं।" इसके बाद दूसरे दुल्हे ने अपनी पत्नी को खबर भिजवाई। "मालूम है, वे मुझे यूँही बुला रहे हैं। अगर काम हो, तो उनको ही यहाँ आने के लिए कहो।" नौकर ने आकर कहा। नौकर के यह कहते ही पेट्रूशियो हँस पड़ा। उसने उससे कहा-"तुम मालकिन के पास जाकर कहो कि मैंने उनको यहाँ आने के लिए हुक्म दिया है।"

"वे हरगिज नहीं आयेंगी।" नये दुल्हे अभी कह रहे थे कि केथरीन ने आकर पूछा-"क्यों बुला रहे हैं?"

"तुम जाकर दोनों दुल्हनों को बुला कर लाओ।" उसने कहा।

केथरीन जाकर दुल्हनों को बुला लाई। सब उसके परिवर्तन को देखकर अचम्भे में पड़ गये। केथरीन के पिता बाप्टिस्टा ने पेट्रूशियो से कहा-"बेटा, तुम सचमुच समझदार हो। मुझे लग रहा है, जैसे मेरे कोई एक और लड़की हो गई हो। इसलिए बीस हजार और देता हूँ।"

वे ही लोग जो केथरीन को चुड़ैल कहा करते थे, अब उसको महा पतिव्रता कहकर उसकी प्रशंसा करने लगे।



अन्धी सुन्दरी




विक्रमार्क तो हठ छोड़ना जानता ही नहीं था। वह फिर पेड़ के पास गया। शव को उतार कर, कन्धे पर डाल चुपचाप वह श्मशान की ओर चला। तब शव में स्थित बेताल ने कहा-"राजा! यदि तुम लोगों की सहायता हो, तो लङ्ङड़े बिना पैर के,

गूङ्गे बिना वाणी के, अन्धे बिना आँखों के आराम से जी सकते हैं, यह दिखाने के लिए मैं तुम्हें हेमवती की कहानी सुनाता हूँ।"

काञ्चनपुर के पास एक ग्राम में हेमवती नाम की लड़की रहा करती थी। उसके माँ-बाप सम्पन्न थे। जब वह दस वर्ष की थी कि आँखों से दीखना कम हुआ, और थोड़े दिनों में ही यह बिल्कुल अन्धी हो गई। और इसके कुछ दिनों बाद

हेमवती के पिता की सारी सम्पत्ति महाजनों के हाथ चली गई।

हेमवती की माँ और बन्धुओं ने यह हेमवती को न जानने दिया।

सम्पत्ति सारी चली गई थी; पर उन्होंने हेमवती को कोई कमी न होने दी। भले ही और रूखी सूखी ही खाते हों, उसको वे मिठाई ही देते रहे। वह रेशमी कपड़े ही पहनती। गद्दों पर ही सोती। सिवाय इसके कि उसको दिखाई न देता था, उसको और कोई फिक्र न थी।

इस तरह दस साल गुजर गये। हेमवती अपने अन्धेपन की भी आदी हो गई। यह जानती थी कि अन्धी होने के कारण उसका विवाह न होगा।

लोगों ने कहा भी कि वह बहुत सुन्दर थी, पर उसने कभी आशा न की थी कि कभी उसकी शादी होगी। कितनी भी सुन्दर हो तो क्या? कौन अन्धी से विवाह करेगा? इसलिये उसने सोचा, बिना किसी कमी के उसकी जिन्दगी घर में ही कट जायगी।

एक दिन हेमवती के घर एक नवयुवक आया। उसका नाम



सोमदत्त था। हेमवती का तो उससे परिचय न था। पर वह उस कुटुम्ब से अपरिचित न था। वह नगर में वैद्यक सीखा करता था।

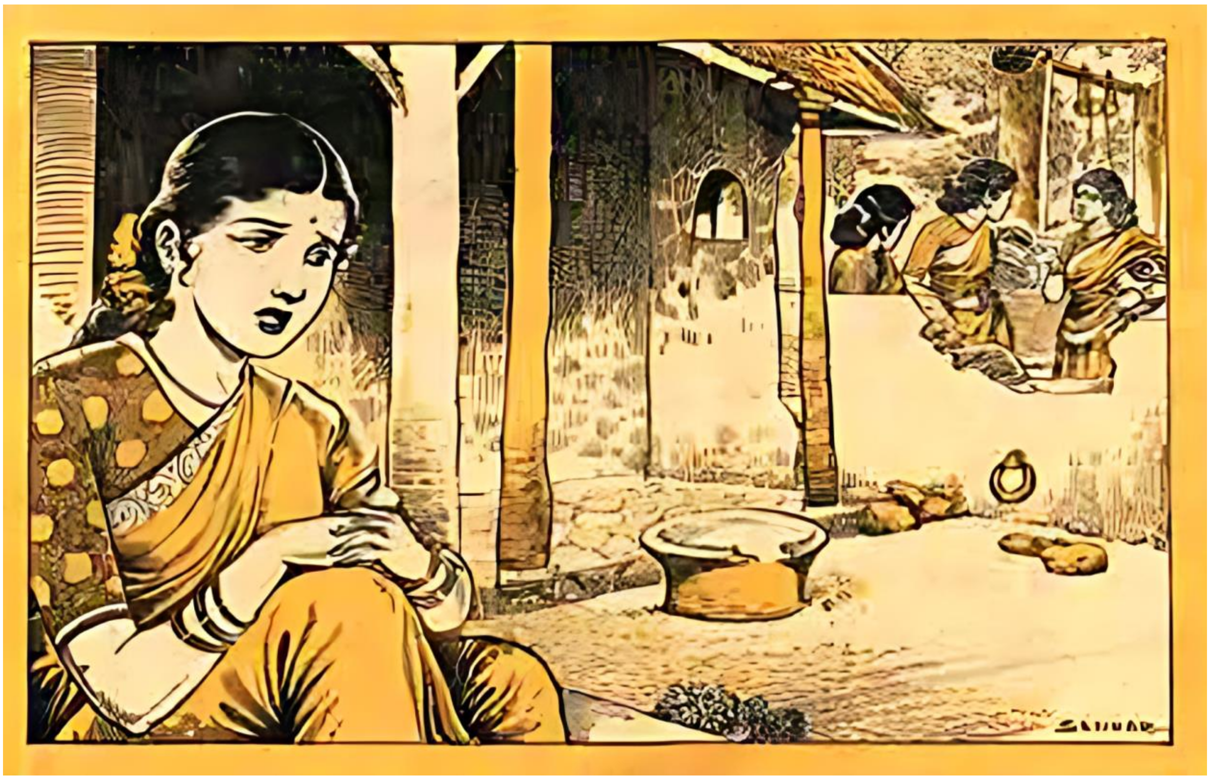
सोमदत्त ने हेमवती से बड़े आदर से बातचीत की। उसके सौन्दर्य की प्रशंसा की। उसने आखिर उससे कहा-"मैं प्रेम से तुम्हारी देखभाल करूँगा, क्या तुम मुझ से विवाह करोगी?"

हेमवती को यह जानकर तो खुशी हुई कि उससे एक नवयुवक शादी करने के लिये तैयार था। पर कुछ दिनों बाद उसको अन्धी जान, हो सकता है, वह नफरत

करने लगे। यह भी सम्भव है कि ससुराल में वे सब आराम न मिलें जो उसको घर में मिल रहे थे। उसने सोमदत्त से कहा-"'भला मुझ जैसी के लिये क्यों शादी? क्योंकि हमारे लोगों के पास रुपया पैसा है, इसीलिये वे मेरे खर्च उठा रहे हैं। मैंने यहीं ही अपना जीवन बिता देने का निश्चय किया है।"

सोमदत्त ने कुछ भी न कहा। वह दो दिन रह कर नगर वापस चला गया। उसके जाने के कुछ दिनों बाद हेमवती को पता लगा कि उसके माँ बाप गरीब हो गये थे।

बात ऐसी हुई कि वह एक दिन घर के पिछवाड़े में बैठी हुई थी। वहाँ अड़ोस-पड़ोस की औरतें बातें कर रही थीं। उसने सुन लीं। अन्धों के कान तेज होते हैं। अड़ोस-पड़ोस की औरतें कानों में बात कर रही थीं, पर हेमबती को असलियत मालूम हो ही गई। वह जान गई कि कहीं उसे तकलीफ न हो इसलिए माँ बाप ने सच न बताया था, और वे उसके सुख-आनन्द के लिए तरह तरह के कष्ट झेल रहे थे। यदि यह बात पहले मालूम होती तो वह तभी सोमदत्त से विवाह करने के लिए मान जाती।



थोड़े दिनों बाद सोमदत्त फिर आया। उसने हेमवती से पूछा- "हेमा, मुझसे शादी करने के लिए तो तुम्हें कोई आपत्ति नहीं है? मैं तुम्हें कोई कष्ट न होने दूँगा। मैं तुम्हारे लिए शीशे की तरह रहूँगा। तुम्हारे अन्धेपन की कमी भी जाती रहेगी। जो तुम न देख पाओगी, उसका वर्णन करके मैं तुम्हें समझाऊँगा। मुझसे विवाह कर लो।"

"और भला क्या चाहूँगी सिवाय आपसे शादी करने के? सिवाय आपके किसी और ने मुझसे यह पूछा भी नहीं। परन्तु मैं नहीं चाहती कि आप मेरे लिए अपनी जिन्दगी बर्बाद करें। इसीलिए हिचक रही हूँ।" हेमवती कहा।

"देखो हेमा, तुम अच्छी हो, पर में तुम्हारे सौन्दर्य को देखकर तुमसे शादी कर रहा हूँ। इसमें कोई परार्थ नहीं है। आँखोंवाली सुन्दरी मुझसे क्यों विवाह करेगी? मैं बहुत ही बदसूरत हूँ। तुम जैसी पत्नी का मिलना मेरे लिए सौभाग्य की बात है।" सोमदत्त ने कहा।

यह सुनकर हेमवती को कुछ भरोसा हुआ। सोमदत्त खूबसूरत हो, या बदसूरत,





एक दिन सोमदत्त ने अपनी पत्नी से कहा-"क्या तुम जानती हो, तुम्हें क्यों नहीं दिखाई देता? तुम्हारी आँखों में सफेदी आ गई है। अगर उसको हटा दिया गया तो तुम भी देख सकोगी।"

यह सुनते ही हेमवती पहले तो खुश हुई। फिर सोचा कि न दिखाई देना ही अच्छा था। दिखाई देने पर दुनिया देख सकती थी। प्रकृति के सौन्दर्य का आनन्द ले सकती थी। क्योंकि वह अन्धी थी इसलिए वह पति से प्रेम करती थी। उसके प्रति कृतज्ञ थी। उसकी बदसूरती देखकर, अगर उसका दिल बदल गया, तो उसके जीवन में फिर कभी आनन्द न आयेगा।"

उसकी अन्धी आँखों के लिए दोनों ही समान थे। और बातों में वह अच्छा था ही। अच्छी तरह बात करता था। बगल में बैठकर हर चीज का वर्णन करता था। उसकी उपस्थिति में लगता था, जैसे उसकी आँखें हो। इसलिए हेमवती उससे विवाह के लिए मान गई। दोनों का विवाह हुआ। उसे यह जानकर खुशी हुई कि माँ-बाप का बोझ हल्का हो गया था।

सोमदत्त ने अपना वचन निभाया। उसने अपनी अन्धी पत्नी को कोई भी कष्ट न होने दिया। वह हमेशा उसको खुश रखने की कोशिश करता।

यह सोच हेमवती ने कहा-"आँखों के न होने से क्या हो गया? आप मुझ अन्धी के लिए शोशे की तरह जो हैं।"

कुछ दिन बीत गये। हेमवती के एक लड़का पैदा हुआ। सब ने उसे देखकर कहा-"हाँ, कितना सुन्दर है। बिल्कुल माँ पर है।" उस बच्चे को, जिसको सारा संसार सुन्दर बता रहा था, और वह न देख

पा रही थी, इसलिए उसका मातृ हृदय चिन्तित रहने लगा। कितनी ही बातों का वर्णन जब वह अपने पति के मुँह सुनती तो उसे उन्हें देखने की इच्छा न होती, सुनकर ही सन्तुष्ट हो जाती। पर जब वह पुत्र का वर्णन करता, तो उसको दुःख होता कि यह उसको देख नहीं पा रही थी। उसका अन्धापन और अखरता।

एक दिन उसने अपने पति से कहा- "आपने बताया था कि मेरी आँखों का इलाज किया जा सकता है। वह इलाज कौन करते हैं?" उसने पूछा।

"मैं ही करता हूँ। बहुत आसान है इसकी चिकित्सा। सात आठ दिन आँखों पर पट्टी बाँधी जायेगी, फिर खोली जा सकती है।" सोमदत्त ने कहा।

"तो मेरा इलाज कीजिये।" हेमवती ने कहा। सोमदत्त ने उसकी आँखों से सफेदी निकाल दी। और पट्टी बाँध दी। कुछ दिनों बाद उसकी माँ ने अपने हाथों से उसकी पट्टी खोली। हेमवती को फिर दिखाई देने लगा।

उसे उसका लड़का दिखाया गया। उसकी खुशी का कोई ठिकाना न रहा।



आईने में अपने को देखकर वह और भी खुश हुई। फिर उसने पूछा-"वे कहाँ हैं?" उसी समय सोमदत्त उसके पास आया। हेमवती विश्वास न कर सकी कि वह ही उसका पति था। क्योंकि वह बदसूरत तो था नहीं और तो और यह बहुत खूबसूरत था। जब उसको पता लगा कि वह खूबसूरत व्यक्ति ही उसका पति था, तो उसके आनन्द की सीमा ही नहीं रही।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा-"राजन्! मुझे एक सन्देह है। क्यों सोमदत्त ने झूठ बोला था कि वह बदसूरत था? जो बदसूरत पति को न देखना चाहती थी, इसलिए अन्धी ही रहनी चाहती थी, क्यों लड़के को देखने के लिए नजर चाहने लगी? क्या उसको पति पर पुत्र की अपेक्षा कम प्रेम था? अगर इन प्रश्नों का उत्तर जान बूझकर न दिया तो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।"

विक्रमार्क ने कहा-"हेमवती को पति पर प्रेम था, इसलिए ही उसने उसकी बदसूरती न देखने का निश्चय किया था। उसका विश्वास था कि उसका पति सचमुच बदसूरत था। अपने लड़के के बारे में ऐसा कोई सन्देह न था। सभी ने कहा था कि वह बहुत सुन्दर था। इसीलिए ही उसने दृष्टि चाही, उसको देखने के लिए, वह अपने बदसूरत पति को देखने के लिए भी मान गई। सोमदत्त ने इसलिए अपने को बदसूरत बताया था कि वह यह न समझे कि अन्धी से विवाह करके कोई बहुत बड़ा त्याग कर रहा था।"

राजा का इस प्रकार मौनभङ्ग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)



होशियार आदमी

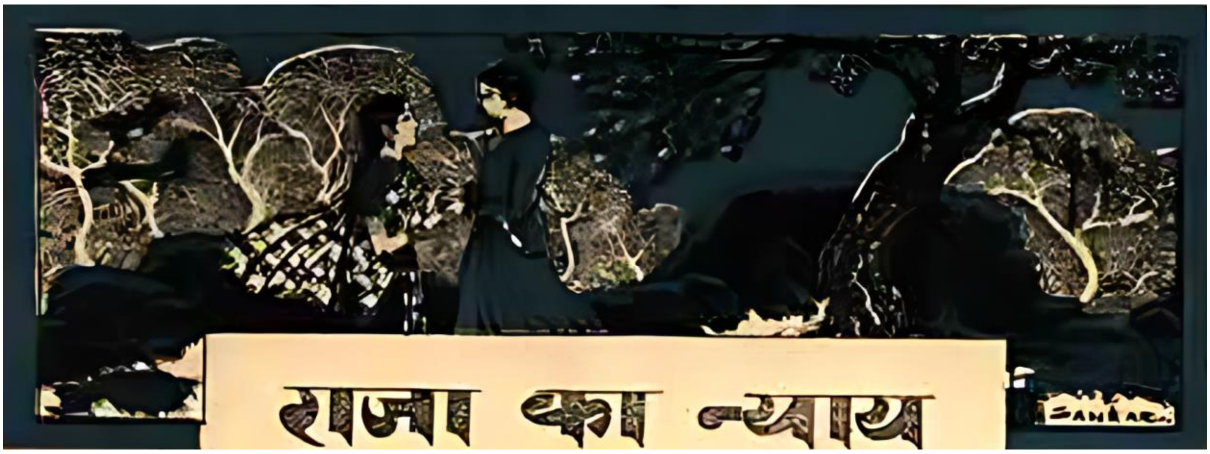
एक राजा, मन्त्रियों से राज्य कार्य के विषय में बातचीत कर रहा था। मन्त्रियाँ ने अपनी अपनी सलाह दी। सब सुनने के बाद राजा ने विदूषक, जो दीवार सहारे खड़ा था-से पूछा-"क्यों भाई, अब सब सुन ही लिया है। तुम किसकी राय से सहमत हो?''

"महाराज, आपकी राय ही सबसे अच्छी है।" विदूषक ने कहा।

इसके बाद, शाम को मन्त्रियों ने विदूषक से पूछा-"हमें तुम्हारा रुख बिल्कुल अच्छा नहीं लग रहा है। हम इतने अनुभवी हैं। तुम्हें हमारी बातें पसन्द नहीं हैं। राजा की बातों में तुम्हें ऐसी कौन-सी बड़ी बात लगी?"

यह सुन विदूषक ने हँसकर कहा-"जिस बात के बारे में बातचीत हुई है, वह भविष्य में कैसी करवट लेगी, यह भगवान ही जानते हैं। इसलिए राजा की बात से सहमत होना ही अच्छा है। अगर इससे कुछ खराबी हुई, तो राजा ही उसके लिए जिम्मेवार होंगे, हमारे प्राणों का कुछ न होगा। अगर वे दिन दहाड़े यह कहें-'ओह, कितना गाढ़ा अन्धकार है।' तो 'हाँ, महाराज, चन्द्र भी बादलों के पीछे छुप गया है।' हमें भी ऐसा जवाब देना चाहिए। हिसाब खतम।" उसने कहा।





नागपुर के राजा शक्तसिंह के दरबार में दो व्यक्ति थे जिन पर उसको गर्व था। उनमें एक सूर्यवर्मा नाम का सामन्त था। वह राजा का निकट बन्धु भी था। उसकी एक विवाह योग्य लड़की थी, जिसका नाम भाग्यवती था।

दूसरा व्यक्ति चन्द्रपाल नाम का नवयुवक था। यह राजा का प्रधान अङ्गरक्षक था। राजा जब युद्ध में जाता, तो वह भी साथ जाता, खूब बहादुरी दिखाता। उसने युद्ध में राजा के प्राण कई बार बचाये थे। इसलिए राजा उसको अपने पुत्र से भी अधिक चाहता था। राजा के सैनिक उसको भगवान समझकर उसकी पूजा किया करते।

सूर्यवर्मा की लड़की भाग्यवती ने चन्द्रपाल को अपना पति चुन लिया था। मौका देखकर उसने उसको बुलवाया। दोनों में बातचीत हुई। क्योंकि एक दूसरे को वे प्रेम करते थे, इसलिए उन्होंने विवाह कर लेने का निश्चय किया।

चन्द्रपाल ने इस बारे में राजा को बताया। राजा ने सूर्यवर्मा को बुलाकर कहा-"सुना है, चन्द्रपाल तुम्हारी लड़की भाग्यवती से प्रेम कर रहा है। आओ। उन दोनों का विवाह क्यों न करवा दें।"

यह सुनते ही सूर्यवर्मा की भौहें चढ़ गई। "यह कभी नहीं हो सकता। मैं शादी की अनुमति हरगिज न दूँगा। मुझे यह भी विश्वास नहीं है कि मेरी लड़की चन्द्रपाल से प्रेम कर रही है।" उसने राजा से कहा।

सूर्यवर्मा ने घर जाकर अपनी लड़की से बातचीत की। भाग्यवती मान गई कि वह

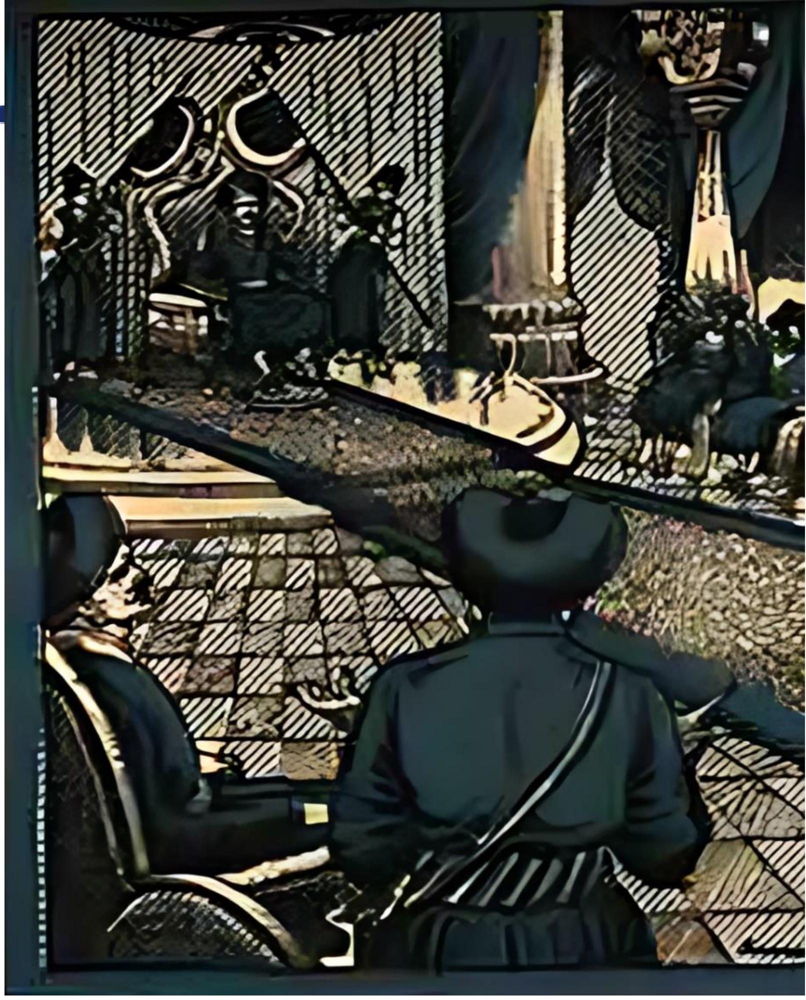
चन्द्रपाल से प्रेम कर रही थी। सूर्यवर्मा आगबबूला हो गया। उसने उसको बुरी तरह डाँटा फटकारा।

अगले दिन भाग्यवती घर से निकल गई और चन्द्रपाल से जाकर मिली। एक पुरोहित ने उन दोनों का विवाह करवाया। वे दोनों जङ्गल में रहने लगे।

वह जङ्गल चन्द्रपाल का था। कुछ दिन पहले राजा ने चन्द्रपाल को नगर से बाहर कुछ ज़मीन दी थी। उसमें एक तरफ अशोक के पेड़ थे। वहाँ चन्द्रपाल ने एक कुटिया बनाई। वहीं वह पत्नी के साथ रहने लगा।

सूर्यवर्मा ने राजा से एकान्त में मिलकर कहा-"ऐसी हालत है कि मैं सिर उठाकर नहीं चल सकता। अगर चन्द्रपाल को आपने खबर भिजवाई कि वह मेरी लड़की मुझे वापस कर दे, तो वह आपके आदेश का उल्लंघन न करेगा।" राजा ने कह तो दिया खबर भिजवाऊँगा।" पर उसने भेजी नहीं। उसने सूर्यवर्मा की बात अनसुनी कर दी।

राजा को दखल देने के लिए बाध्य करने के उद्देश्य से सूर्यवर्मा ने एक



चाल सोची। उसने भरे दरबार में खड़े होकर कहा-"मालूम हुआ है कि चन्द्रपाल मेरी लड़की को जबर्दस्ती ले गया है और उसने उसको जङ्गल में रख रखा है। मेरी प्रार्थना है कि मेरी लड़की मुझे सौंपी जाये और उस दुष्ट को सजा दी जाय।"

अब राजा को विवश हो कार्यवाई करनी पड़ी। उसने अपने सैनिकों को आज्ञा दी-"तुम जङ्गल में जाकर चन्द्रपाल को पकड़ कर लाओ। भाग्यवती को सुरक्षित उसके घर पहुँचा दो।"



थोड़ी देर बाद सूर्यवर्मा सैनिकों के साथ आया। उनको कुटिया के चारों ओर खड़ा करके उसने किवाड़ खटखटाया। चन्द्रपाल बाहर आया। उसने सूर्यवर्मा को टकटकी लगाकर देखा-"क्या आप में बहादुरी कम है, जो साथ इतने आदमी लाये हैं? आइये हम दोनों आज फैसला कर लें।" उसने कहा और तलवार निकाली।

"मुझे तुम्हारे साथ युद्ध करने की क्या पड़ी है? रे, इस नीच को पकड़ो।" सूर्यवर्मा ने सैनिकों से कहा। उनमें से एक भी न हिला। चन्द्रपाल ने सूर्यवर्मा को द्वन्द्वयुद्ध के लिए कभी ललकारा था। पर उसने युद्ध करने से इनकार कर दिया था, इसलिए सैनिक सूर्यवर्मा से घृणा करने लगे थे।

"अच्छा, तो पकड़ो।" कहकर चन्द्रपाल सैनिकों के बीच में से जङ्गल में भागा। सैनिकों ने हटकर उसको रास्ता दिया, पर उसको पकड़ा नहीं। कुटिया में बहुत खोजा, पर कहीं भाग्यवती का पता न था। सूर्यवर्मा की सारी कोशिशें मिट्टी में मिल गई।

तुरन्त दो सौ सैनिक हथियार लेकर अशोक बन गये। सूर्यवर्मा भी तलवार लेकर तीर की तरह उनके साथ गया।

सच कहा जाये, तो सैनिक चन्द्रपाल को बहुत चाहते थे। उनमें से एक भी उससे युद्ध नहीं करना चाहता था। इसलिए अपने में से दो को चन्द्रपाल के पास भेज कर, उन्होंने उसको परिस्थिति बताई।

यह पता लगते ही कि सूर्यवर्मा, राज सैनिकों के साथ उसको पकड़ने के लिए आ रहा था, चन्द्रपाल भाग्यवती को दूर कहीं छुपाकर, वापस कुटिया में चला आया।

सूर्यवर्मा जान गया कि राजा पर भरोसा रखने से काम न बनेगा। इसलिए उसने एक और चाल सोची। उसने कुछ कवियों और गायकों को बुलाकर, उनको खूब पैसा देकर कहा-"आप अशोक वन में जाइये। वहाँ चन्द्रपाल की प्रशंसा में कवितायें सुनाइये, गीत गाइये। इस बीच हमारे नौकर उसको पकड़कर ले आयेंगे। फिर आप अपने रास्ते जा सकते हैं।"

यह चाल चल गई, जब कवि, गायक, कुटीर के पास जाकर चन्द्रपाल के गुण गा रहे थे, तब सूर्यवर्मा के नौकरों ने उसको पकड़ लिया। उसको ले जाकर उन्होंने सूर्यवर्मा के सामने हाजिर किया। वह उसको पकड़कर बरबार ले गया। राजा से कहा-"महाराज, अपराधी को पकड़कर लाया हूँ। सुनवाई कीजिये।"

राजा ने चन्द्रपाल से कहा-"सुना है कि तुम भाग्यवती को जबर्दस्ती ले गये थे। तुम क्या कहते हो?"

"अगर यही मेरा अपराध है तो महराज में निर्दोष हूँ। भाम्यवती ने स्वयं मेरे पास आकर मुझ से विवाह किया।" चन्द्रपाल ने कहा।



सूर्यवर्मा ने गुस्से में कहा-" मैंने इसको कन्यादान नहीं किया है। इसलिए पिता के नाते जो मेरे अधिकार भाग्यवती पर हैं, वे अब भी हैं। यह विवाह नहीं माना जायेगा।"

राजा ने दोनों को समझाना चाहा। न सूर्यवर्मा ने अपने पिता के अधिकार छोड़ने चाहे, न चन्द्रवर्मा ने पति के अधिकार।

आखिर राजा ने उठकर कहा- "अच्छा, तो मेरा फैसला सुनो। भाग्यवती दोनों के घर रहेगी। जब तक पत्ते झड़ नहीं जाते, तब तक वह पति के घर रहेगी। पत्तों के झड़ने के बाद वह पिता के घर रहेगी। पत्तों के फिर लगने पर वह पति के यहाँ चली जायेगी।"

यह फैसला सूर्यवर्मा को पसन्द न आया न चन्द्रवर्मा को ही। पर दोनों को उसे मानना पड़ा।

थोड़ा समय गुजर गया। पतझड़ के दिन आये। पेड़ नङ्गे होने लगे। सूर्यवर्मा ने अपने आदमियों को भाग्यवती के पास भेजा, और फैसले के अनुसार उसको साथ लाने के लिए कहा। वह चाहता था कि एक बार उसके घर आने पर उसको वापस न भेजा जाये।

भाग्यवती ने अपने पिता के आदमियों की बात सुनी। उसने उनसे कहा-"पत्तों के झड़ जाने के बाद ही तो मुझे पिता के घर जाना है। अभी तो पत्ते नहीं झड़ रहे हैं। इन पेड़ों के पत्तों के झड़ जाने के बाद मैं पिता के पास चली आऊँगी।" कहकर उसने अशोक वृक्ष दिखाये। सूर्यवर्मा के आदमी चले गये।

अशोक वृक्ष के पत्ते नहीं झड़ते। वे नङ्गे नहीं होते। इसलिए भाग्यवती माइके गई ही नहीं।





एक गाँव में, एक किसान के घर के सामने एक बड़ा पेड़ था। गरमियों में उसकी छाया में ठण्डी बयार बहती-सी लगती थी। किसान वहाँ आकर बैठा करता।

एक दिन दुपहर को, भोजन करने के बाद, पेड़ के नीचे जब वह बैठने गया, तब उसने देखा कि वहाँ कोई बैठा था।

"यह क्या? तुम्हें किसने यहाँ बैठने दिया? जाओ जाओ।" किसान ने उसको धमकाया।

"क्यों यों गुस्सा करते हैं? जरा गरमी ज्यादह है। छाया में कुछ देर बैठ गया हूँ।" उसने कहा।

"यह न चलेगा। यह पेड़ मेरा है। मैंने सालों से पानी देकर इसको पाला है। इसलिए इस पेड़ की साया भी मेरी है।" किसान ने कहा।

"अगर यही बात है तो इस छाया को मुझे बेच दीजिये। मैं पैसे दूँगा।" उस व्यक्ति ने कहा।

पैसे कि बात सुनते ही किसान ललचाया। "अच्छा, बेचूँगा। क्या दोगे?" उसने पूछा।

भाव पटा। दो तीन राहगीरों के सामने उस व्यक्ति ने किसान को पैसे देकर छाया खरीद ली।

उस दिन के बाद, रोज वह आदमी पेड़ के नीचे बैठा करता। अगर रास्ते में कोई जान पहचानवाला जाता दिखाई देता, तो उसे भी बुलाकर बिठाता। अगर उनके साथ गौ, भैंसे होतीं तो उन्हें भी बिठाता। सभी तरह के लोग आते और वह उनसे कुछ भी न लेता। यही नहीं, छाया खरीदनेवाला वह आदमी एक

श्यामनुन्दर

और काम करने लगा। जहाँ जहाँ पेड़ की साया पड़ती वहाँ वहाँ वह जाता। समय और ऋतु के अनुसार पेड़ की साया कभी किसान के घर के आङ्गन में, कभी उसके सोने के कमरे में, कभी बरामदे में पड़ती। और वह आदमी बिना आगा पीछे देखे जहाँ साया पड़ती वहाँ जा बैठता। इससे किसान को असुविधा होती।

यह सब देख किसान को बहुत गुस्सा आया। "हमारे आङ्गन में, घर में, कमरे में, तुम्हें बैठने का क्या हक है?"

"बाबू, मैंने आपके पेड़ की साया पैसे देकर खरीदी है। वह जहाँ जहाँ पड़ेगी, वहाँ वहाँ बैठने का मुझे पूरा हक है।" उसने कहा।

किसान जरा तिलमिलाया। यह बात सच थी कि उसने पेड़ की छाया उसे बेच दी थी।

एक दिन किसान के घर दाबत थी। बन्धु सम्बन्धी आये हुए थे। वे जहाँ भोजन कर रहे थे, वहाँ पेड़ की छाया पड़ी। उसी समय वह आदमी भी वहाँ आकर बैठ गया। अतिथियों को उसका वहाँ आकर, उस तरह बैठना समझ में नहीं आया। "अरे बिना बुलाये ही यहाँ कोई आ पड़ा, और टाँगे लम्बी करके लेटा हुआ है।" वे आपस में एक दूसरे से कहने लगे।

उस व्यक्ति ने अतिथियों से कहा कि उसने सामने के पेड़ की छाया खरीद ली थी। अतिथि यह सुनकर ठहाका मारकर हँसे।

किसान उन सब के सामने शर्मिन्दा हुआ। वह उस गाँव में न रह सका। अगले दिन वह अपने कुटुम्ब को लेकर, ग्राम छोड़कर कहीं चला गया।





विन्ध्याचल पर्वत में कपिला और घवला दो देश थे। उन दोनों के बीच एक पर्वत श्रेणी थी। उसमें उपजाऊ घाटियाँ और जङ्गल थे। कपिल और धवल देशों की सीमायें ठीक तरह निश्चित न थीं। इसलिए दोनों देश पर्वत के वनों और घाटियों को अपना बताते। उनके बारे में झगड़ते। पशुओं के लिए अगर एक देशवाले घास काटकर रखते, तो दूसरे देशवाले उसे उठा ले जाते। जङ्गल के पशुओं को भी अगर एक देशवाले मारते तो दूसरे देशवाले उठा ले जाते। हर चीज के बारे में खींचातानी होती।

धवल देश के लोगों और कपिल देश के लोगों में यह झगड़ा कई पुश्तों से चला आ रहा था।

आखिर दोनों देशवाले इस तरह के झगड़ों से ऊब गये। उन्होंने अपने अपने देशों की सीमाओं को निश्चित करने का निर्णय किया। इसके लिए उन्होंने एक समझौता किया। समझौता यह था कि एक दिन सवेरे सवेरे जब पहला मुरगा बाँग दें, तो कपिल नगर से एक युवक और धवल नगर से एक युवक, एक दूसरे की ओर दौड़ना शुरू करें, जहाँ वे दोनों मिलें, वहाँ दोनों देशों की सीमा निर्धारित की जाय।

तुरन्त दोनों तरफ से अच्छे दौड़नेवाले चुने गये। दो मुरगे भी निश्चित रोज़ बाँग देने के लिए चुने गये।

धवल देशवालों ने मुरगे को एक टोकरे में बन्द कर दिया। उसको खाने को कुछ न दिया। उनका ख़्याल था कि भूख के कारण वह अधिक देर सो न सकेगा और जल्दी ही बाँग देगा।

रामेश्वर

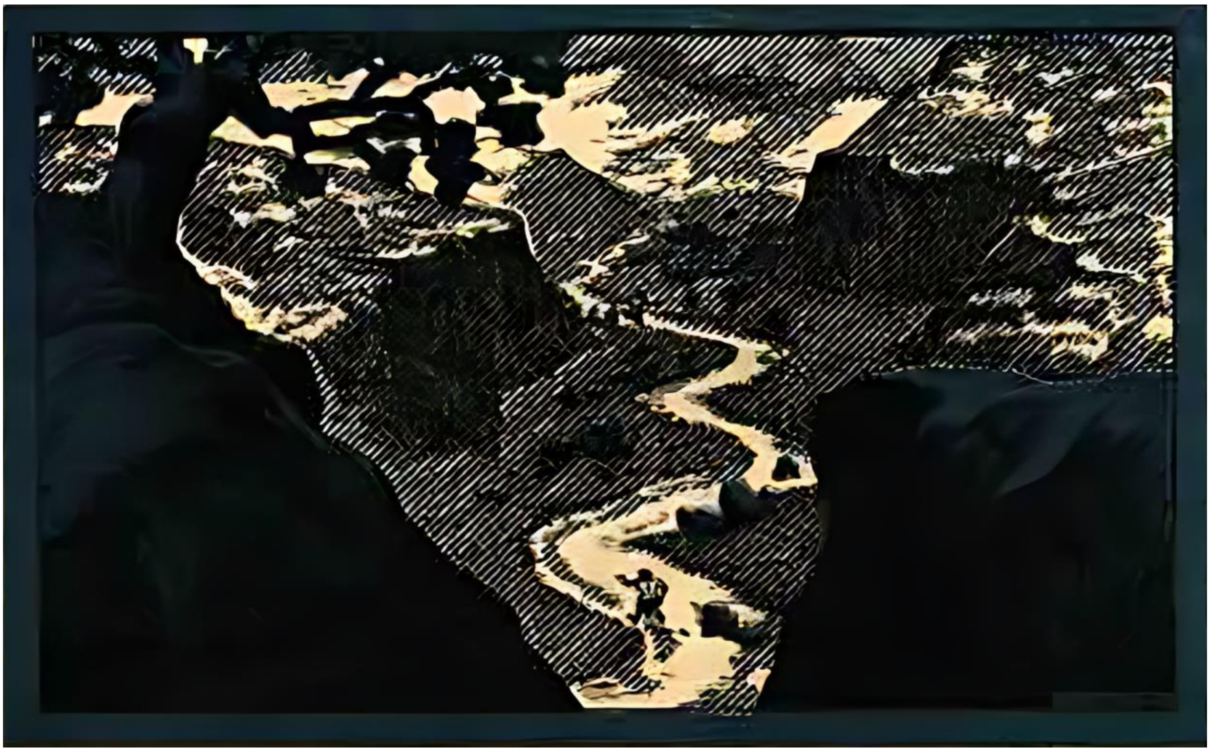
कपिल लोगों ने ऐसा न किया। उन्होंने अपने मुरगे को खूब खिलाया। उनका विश्वास था कि उसे इतना खिलाया गया था कि कृतज्ञता के रूप में वह जल्द ही बाँग देगा। निश्चित दिन आया। अभी पौ भी न फटा था कि धवल के मुरगे ने बाँग दी। तुरन्त धवल का युवक कपिल नगर की ओर भागने लगा।

परन्तु पहाड़ से परे कपिल में सवेरे होने के बाद भी मुरगा सो ही रहा था। उसके चारों ओर लोग लम्बा चेहरा किये खड़े थे। परन्तु समझौते के अनुसार एक ने भी उसको न उठाया।

अखिर मुरगा उठा और पंख फड़फड़ाकर बाँग देने लगा।

कपिल का नवयुवक यथाशक्ति धवल की ओर दौड़ने लगा। वह जानता था कि उसने देरी से दौड़ना शुरू किया था, इसलिए उसके लोगों को काफी नुक्सान हुआ था। इसलिए थक जाने पर भी वह भागता रहा।

पर जब वह पहाड़ के पास पहुँचा, और सिर उठाकर देखा तो धवल का



नवयुवक चोटी पार करके पहाड़ से उतर रहा था। समझौते के अनुसार दोनों नगरों के बीच की घाटियाँ और जङ्गल, तभी धवल देश के हो चुके थे।

कपिल युवक हाँफता हाँफता पहाड़ पर चढ़ा और आधे रास्ते में धवल के युवक से मिला।

"यही हमारी सीमा है।" धवल के नवयुवक ने मिलन स्थल पर डण्डा गाड़ते हुए कहा।

कपिल का नवयुवक पसीना पसीना हो गया। "भाई यह हमारे पशुओं का चरागाह है। तुमने जीत लिया है। थोड़ा हमें भी दे दो।" हाँफता हुआ कपिल युवक गिड़गिड़ाया। धवल युवक इसके लिए न माना। परन्तु कपिल नवयुवक उसके पैरों पड़ गया। धवल युवक को उसे देखकर दया आई।

"अच्छा, मुझे उठाकर पहाड़ पर जितनी दूर ले जाओगे, वह सब मैं तुम्हें दे दूँगा।" धवल युवक ने कहा।

कपिल युवक ने कोई जवाब न दिया। उसने उसको अपने कन्धों पर चढ़ा लिया और पहाड़ पर चढ़ना शुरु किया। कदम कदम पर उसका दिल थकान के कारण बैठता-सा लगता था।

वह थोड़ी दूर ही पहाड़ पर चढ़ा था कि उसका दम भर आया। वह नीचे गिर गया। उसी समय उसकी मौत हो गई।

सीमा का निर्धारण देखने के लिए आये हुए दोनों देशों के लोग उसके चारों ओर जमा हो गये।

कपिल के सरदार ने धवल के सरदार से कहा-"सच है कि आपने भूमि पा ली है, पर हमने एक महावीर पाया है।"





बिम्बसार के राज्यकाल में एक गरीब रहा करता था, जिसका नाम कालवलि था। वह मेहनत करके जिन्दगी बसर किया करता। एक दिन उसको कहीं काम न मिला। उस दिन उसकी पत्नी ने जैसे-तैसे माण्ड तैयार की। बुद्ध के शिष्यों में से एक, जिसका नाम महाकाव्यप था, उस दिन भिक्षा पात्र लेकर उसके घर आया। कालवलि की पत्नी ने उस माण्ड को उसे दे दिया।

महाकाष्यप ने उस माण्ड को ले जाकर बुद्ध को दी। उसने पूछा- "इस माण्ड को देनेवाले सी को क्या प्रतिफल मिलेगा?"

"एक सप्ताह में यह स्त्री एक बड़े खानदान की होनेवाली है।" बुद्ध ने कहा। इसके सात दिन बाद राजा श्मशान की ओर से जा रहा था। वहाँ उसको एक ऐसा अपराधी दिखाई दिया, जिसको फाँसी दी जा चुकी थी; पर जिसमें थोड़े प्राण बाकी रह गये थे।

"क्या मैं तुम्हारा कोई उपकार कर सकता हूँ?" राजा ने पूछा ।

"मुझे भूख लग रही है। राजमहल से मेरे लिए कुछ भोजन भिजवाइये।" उस अपराधी ने कहा।



राजा को उसे देखकर दया आ गई और वह भोजन भेजने के लिए मान गया। उसने अपने एक कर्मचारी से कहा-"श्मशान में जिसको फाँसी दी गई है, उसको हमारे भण्डार से भोजन निजवाओ।"

आधी रात के समय श्मशान में भोजन ले जाने के लिए उन्हें कोई आदमी नहीं मिला। सौभाग्यवश कालवलि की पत्नी यह काम करने के लिए मान गई। वह खाना लेकर श्मशान की ओर जा रही थी कि रास्ते में एक पेड़ पर बैठे भूत ने पूछा-"क्या यह भोजन मेरे लिए ही है?"

"नहीं, श्मशान में एक और आदमी है, उसके लिए।" उसने जवाब दिया।

"देखो, तुम्हारे रास्ते में फलाने ताड़ के पेड़ पर देवसुमन रहता है। क्या तुम उसे बता सकोगी कि उसकी लड़की काली ने एक लड़के को जन्म दिया है?" उस भूत ने कहा।

कालबलि की पत्नी यह करने के लिए मान गई। ताड़ के पेड़ के पास आते ही यह चिल्लाई-"ए, सुमन! तुम्हारी लड़की की एक लड़का हुआ है।"

ताड़ के पेड़ पर बैठे सुमन ने कहा-"अच्छी खबर लाई हो। इस ताड़ के पेड़ की जड़ में खज़ाना है। उसे खोदकर ले जाओ। यही मेरा ईनाम है।"

वह स्त्री वहाँ से श्मशान गई। फाँसी लगे अपराधी से कहा-"राजा के घर से भोजन लाई हूँ। क्या इसे खाओगे?"

उसने कहा-"हाँ दो।" वह जल्दी-जल्दी सारा भोजन हड़प गया। फिर उसने उससे कहा-"जरा मेरा मुख तो पोंछ दो।" ज्योंही बह उसका मुख पोंछने के लिए आगे बढ़ी त्योंही उसने उसके सिर के बाल मुख से पकड़ लिये, और उन्हें छोड़ा नहीं।

और बिचारी वह क्या करती? उसके मुख में जितने बाल चले गये थे, चाकू से उनको काटकर वह राजमहल वापस चली आई। जब राजा ने पूछा-"यह कैसे साबित कर सकती हो कि तुमने श्मशान जाकर उस अपराधी को भोजन दिया?" उसने कहा-"महाराज, जो बाल मैंने काट दिये हैं, वे आपको अपराधी के मुख में दिखाई देंगे। यही नहीं, रास्ते में मुझे भूतों ने बताया कि एक ताड़ के पेड़ के नीचे खजाना है। उन्होंने मुझे खोदकर ले जाने के लिए भी कहा।"

अगले दिन राजा ने उसकी बताई हुई दोनों चीज़ों को देखा। ताड़ की जड़ को खोदने पर कालवलि की स्त्री के कथनानुसार खजाना मिला। राजा ने उसके साहस और सौभाग्य की सराहना की। उसको और उसके पति के अच्छा पद दिया। बुद्ध की बात इस तरह सच निकली।

* * * *

राजगृह के पास एकनालक नाम का एक ग्राम था। उस ग्राम में काशी भारद्वाज नाम का एक ब्राह्मण रहा करता था। उसने एक वर्ष हलोत्सव करवाया। पाँच सौ



हलों में हज़ार बैल जोते गये। बैलों के माथों पर चान्दी की परतें लगाई गई। उनके गलों में पुष्पमालायें डाली गई। हलों की नोकों पर सोना मढ़ा गया। हल चलानेवालों ने भी रङ्गबिरङ्गे कपड़े पहने। हज़ारों आदमी उत्सव देखने आये। बुद्ध भी आये। वे तब दक्षिणगिरि नामक बिहार में रह रहे थे।

उत्सव के पूर्व, ब्राह्मण की पत्नी ने चावल, धी, मिठाई आदि बाँटा। भोजन के बाद बुद्ध एक ऊँचे स्थल पर खड़े हो गये। उत्सव में आये हुए लोग उनको घेर कर खड़े हो गये। यह देख ब्राह्मण ने



कहा-"लगता है यह सन्यासी उत्सव स्वराब करने आया है।" उसे बुद्ध पर गुस्सा आया। उसने बुद्ध के पास जाकर कहा-"श्रमण जी, मैं भूमि जोतकर, बीज बोकर खेती करके फसल पाता हूँ। अगर तुम भी मेरी तरह मेहनत करोगे तो तुम्हें भी किसी बात की कमी न रहेगी।"

"हे ब्राह्मण, मैं भी तुम्हारी तरह कर्षक हूँ। पर मेरी फसल अमृतमय है।" बुद्ध ने कहा।

बुद्ध की बात उस ब्राह्माण को समझ में नहीं आई। उसने कहा-"आप कह तो रहे हैं कि आप खेती करते हैं, पर आपके हल, बैल वगैरह कहीं नहीं दिखाई देते हैं।"

"मैं धर्म रूपी भूमि को ज्ञान नाम के हल से जोतता हूँ। पवित्रता नाम के बीजों को बोकर, नियम आचरण नाम की खेती करके निर्वाण की फसल पैदा करता हूँ।" वुद्ध ने जवाब दिया। उन्होंने ब्राह्मण से कहा-"तुम भी इस प्रकार की फसल पैदा करो।"

ब्राह्मण बुद्ध का उपदेश सुनकर सन्तुष्ट हुआ। वह उनको अच्छा भोजन देने गया। परन्तु युद्ध ने उसको लेने से इनकार कर दिया। "मैं कोई गायक, नर्तक नहीं कि लोगों का मनोरञ्जन करके प्रतिफल की आशा करूँ। उपदेश का प्रतिफल लेना मेरे नियमों के विरुद्ध है।"

बुद्ध के लिए अर्पित आहार को ब्राह्मण ने किसी और को देना अनुचित समझा। उसने उसको जल में छोड़ दिया। वह बुद्ध के साथ चला गया। कालक्रम से वह अर्हत बना।

*   *   *   *

श्रावस्ती नगर में अनेपीड़ नाम का एक करोड़पति रहा करता था। उसका एक गहरा मित्र था, जो राजगृह में रहा करता था। जब कोई एक दूसरे के नगर जाता तो आनन्द से एक दूसरे को ले जाता और आतिथ्य करता।

एक बार, अनेपीड़ पाँच सौ गाड़ियों में सामान लादकर राजगृह आया। अपने मित्र को नगर के बाहर न पा, उसको आश्चर्य हुआ। अनेपीड़ उस गली में गया, नहाँ उसके मित्र का घर था। घर में गया। पर मित्र लिवा लेने नहीं आया।

अनेपीड़ ने घर में जाकर अपने मित्र को देखा। परन्तु उसने दिखाया कि वह बहुत व्यस्त था, औपचारिक रूप से उसने दो-चार बातें ही की।

उस दिन रात को उस मित्र ने अनेपीड़ के पास आकर कहा "बुरा न मानना कि मैं तुम्हारी अच्छी तरह आवभगत न कर सका। कल मैं बुद्ध और उनके शिष्यों का आतिथ्य कर रहा हूँ। काम में था, इसलिए तुम से बात न कर सका।"

बुद्ध का नाम कान में पड़ते ही अनेपीड़ ने तुरन्त बुद्ध को देखना



चाहा। पर उसके मित्र ने कहा- "अब वे सो रहे होंगे, हमारे जाने से उनकी निद्रा भङ्ग होगी।"

अनेपीड़ जाकर सो गया। परन्तु एक पहर के गुजरने के बाद वह उठा। बाहर प्रकाश था। उसने सोचा कि प्रातःकाल हो गया होगा। परन्तु बाहर आकर पता लगा कि जो प्रकाश उसने देखा था, वह चान्दनी थी। इसलिए वह अन्दर जाकर सो गया। फिर एक पहर के बाद, अनेपीड़ को यही भ्रम हुआ। तीसरी पहर, तीसरी बार उठकर उसने सोचा-"अब तो सचमुच सवेरा हो गया होगा।



मैं बिहार में जाकर बुद्ध के दर्शन करूँगा।" वह उठकर चल दिया।

उसने रास्ते में यों सोचा-"आजकल अपने को बुद्ध कहनेवाले बहुत-से हैं। कहीं मुझे धोखा तो नहीं दिया जायेगा? मुझे बचपन में मेरे माता-पिता सुदत्त कहकर पुकारा करते थे। यह कोई नहीं जानता। अगर इस बुद्ध ने मेरे छुटपन के नाम को बताया तो मैं उसका विश्वास करूँगा। नहीं तो मैं किसी और बुद्ध को खोजूँगा।"

अनेपीड़ के विहार में आते ही बुद्ध ने स्वयं समक्ष आकर कहा-"आओ, सुदत्त।" इस सम्बोधन से अनेपीड़ के सब सन्देह काफ़ूर हो गये। उसने बुद्ध के आश्रम में रहने का निश्चय किया। बुद्ध ने अनेपीड़ को धर्म का उपदेश दिया। अनेपीड़ ने बुद्ध और उनके शिष्यों से प्रार्थना की कि वे अगले दिन उसका आतिथ्य स्वीकार करें। इसके लिए जो खर्च हुआ उसने अपने ऊपर लिया।

इस सम्बन्ध में उसने अपने मित्र की मदद भी न ली। भिक्षा के बाद उसने बुद्ध से श्रावस्ती आने की प्रार्थना की। "श्रावस्ती का राजा, तीन सौ योजन क्षेत्रफलवाले काशी और कोशल पर राज्य करता है। मैं अमीर हूँ। अगर आप आये तो आपको किसी चीज़ की कमी न होगी। मैं सब व्यवस्था कर सकता हूँ।"

राजगृह से श्रावस्ती ४५ योजन दूर था। इस मार्ग में, अनेपीड़ ने बुद्ध के लिए पड़ाव निश्चित किये। सारा रास्ता अलंकृत किया। बुद्ध और उनके शिष्यों के लिए, एक विहार बनाने के लिए उसने एक स्थल चुना। वह स्थल पाँच सौ गज लम्बा चौड़ा था। जेतु राजा का था।

अनेपीड़ ने जेतु के पास जाकर कहा-"क्या आप अपनी जगह बेचेंगे?"

"अगर आप उसे चाहते हैं तो आपको उस सारी जगह पर सोने की मुहरें बिछाकर देनी होंगी, यही उस जगह की कीमत होगी।" जेतु ने कहा। उसने यह नहीं कहना चाहा कि मैं इसे न बेचूँगा।

"सोने की मुहरें बिछा दूँगा.... वह नगह मुझे दीजिये।" अनेपीड़ ने कहा। जब जेतु को मालूम हुआ कि वह वास्तव में वह जगह खरीदना चाहता था तो उसने बेचने से इनकार कर दिया। पर अनेपीड़ ने कहा कि भाव पट गया है; इसलिए जगह बेचनी ही होगी। मामला इतना उलझा कि न्यायालय में पहुँचा। न्यायालय ने अनेपीड़ के पक्ष में फैसला दिया। अनेपीड़ और जेतु मिलकर उस जगह पर गये। आम, और चन्दन के पेड़ों को छोड़कर, बाकी सब पेड़ अनेपीड़ ने कटवा दिये और जगह को समतल करवा दिया। फिर उसने अपना सारा धन मँगवाकर हज़ार आदमियों से जमीन पर रखवाया। पेड़ों ने जितनी जगह ली थी, उसको



नापकर, उतनी मुहरें हिसाब में जोड़ दीं।

अनेपीड़ के बाप दादाओं ने जो सात पीढ़ियों से धन जोड़ा था, वह सब बाहर लाया गया। अट्ठारह करोड़ मुहरें बिछाई गई। परन्तु अभी बहुत जगह थी, जहाँ मुहरें बिछानी थी। "न मालूम यह अनेपीड़ कितना पुण्य पानेवाला है। उतनी अट्ठारह करोड़ मुहरें तो बिछा दी हैं, और बिछाने के लिए तैयार है। मैं भी क्यों न थोड़ा बहुत पुण्य कमा लूँ।" यह सोच जेतु ने अनेपीड़ से कहा-"बस करो! मेरी जगह का मूल्य मुझे मिल गया है।"

उसके बाद अनेपीड़ ने बिहार के लिए भवन बनवाया। बौद्ध भिक्खुओं के रहने के लिए, दिन में सभा सम्मेलन के लिए, रात को सोने के लिए अलग अलग भवन बनवाये। बावड़ियों खुदवाई। फल और फूलों के पौधे लगाये गये। इस आहाते के चारों ओर दो हज़ार गज लम्बी, नौ गज ऊँची चारदिवारी बनवाई। इस विहार के निर्माण के लिए अनेपीड़ की कई ने कई रूपों से सहायता की। किसी ने श्रम की सहायता दी तो किसी ने धन की। इस सब के लिए १८ करोड़ और खर्च हो गया।

यह सब देखने के बाद जेतु ने वे अट्ठारह करोड़ मुहरें भी न रखनी चाहीं, जो उसने भूमि के लिए वसूल की थी। उसने उस धन से बिहार के चारों ओर चार दिव्य भवन, जो सतमञ्ज़ले थे, बनवाये।

इस तरह ५४ करोड़ मुहरों की लागत से जेतवन तैयार हुआ। इस सब व्यवस्था के होने के बाद बुद्ध को निमन्त्रित किया गया। वे अपने शिष्यों के साथ, सोलह मील के बाद पड़ाव करते राजगृह से श्रवस्ती नगर पहुँचे। नगर के बाहर, बुद्ध को लिवा लेने एक बहुत बड़ा जलूस आया। उसमें अनेपीड़, और उनकी दो लड़कियाँ, बड़ी सुभद्रा और छोटी सुभद्रा थीं।

अनेपीड़ ने बुद्ध को विहार में ले जाकर पूछा-"मैं, इस सब को किसको अर्पित करूँ?"

"आज के बौद्धों को, आनेवाले बौद्धों को यह विहार समर्पित कर दो।" बुद्ध ने अनेपीड़ को आज्ञा दी। अनेपीड़ ने बुद्ध के हाथ पर कलशोदक डालकर सर्वकालीन बौद्ध भिक्षुयों को वह सब अर्पित कर दिया।

(अभी है)



CHANDAMAMA (Hindi) SEPTEMBER 1959 Regd. No. M. 5452

